Shodhaamrit, Vol.-1; Issue-2 (July-December) 2024 : Page No.-165-168

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
Vol.-1; issue-2 (July-Dec.) 2024
Page No- 165-168

©2024 Shodhaamrit
www.shodhaamrit.gyanvividha.com

ज्योति कुमारी
शोध छात्रा, इतिहास विभाग,
बी0आर0ए0 बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर (बिहार)–842001

Corresponding Author :
ज्योति कुमारी
शोध छात्रा, इतिहास विभाग,
बी0आर0ए0 बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर (बिहार)–842001

तुलसीदास के ग्रंथों में तीर्थ–परम्परा और देव–उपासना : ऐतिहासिक अध्ययन

शोध सार : मध्यकालीन भारतीय इतिहास और भक्ति आन्दोलन के शिखर पुरुष गोस्वामी तुलसीदास का साहित्य केवल धार्मिक ग्रन्थ नहीं, बल्कि 16वीं–17वीं शताब्दी के भारत का एक जीवंत ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दस्तावेज है। प्रस्तुत शोध–पत्र में तुलसीदास कृत प्रमुख ग्रन्थों– रामचरितमानस, कवितावली, विनय पत्रिका, गीतावली, दोहावली आदि के आधार पर देव–उपासना, तीर्थो, धार्मिक मान्यताओं तथा इनके ऐतिहासिक–सांस्कृतिक आयामों का विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन दर्शाता है कि तुलसीदास के ग्रन्थों में धार्मिक स्थलों और देवी–देवताओं का वर्णन केवल आध्यात्मिकता तक सीमित नहीं है, बल्कि भारतीय समाज की ऐतिहासिक–सांस्कृतिक संरचना को भी प्रतिबिंबित करता है।

प्रस्तावना : भारतीय धार्मिक परम्परा सदैव से तीर्थों, देव–उपासना और आध्यात्मिक आस्थाओं से समृद्ध रही है। तुलसीदास इस परम्परा के एक अत्यंत महत्वपूर्ण कवि हैं जिनके ग्रन्थों में धार्मिक धरोहरों की गहन उपस्थिति मिलती है। उनके वर्णनों में पौराणिकता, लोक–आस्था और ऐतिहासिक आयाम एक साथ जुड़कर एक जीवंत सांस्कृतिक चित्र प्रस्तुत करते हैं। तुलसीदास के ग्रन्थ अपने समय के धार्मिक और सांस्कृतिक परिवेश को समझने के लिए प्राथमिक स्त्रोत माने जाते हैं। उनके द्वारा वर्णित देवस्तुति, तीर्थों की महिमा और धार्मिक स्थानों के संदर्भ में मध्यकालीन भारत की आध्यात्मिकता एवं सांस्कृतिक गतिशीलता को समझने का आधार प्रदान करते हैं।

तुलसीदास के ग्रन्थों में तीर्थ परम्परा : तुलसीदास के साहित्य में धार्मिक स्थलों का वर्णन केवल भक्ति–भावना का प्रतीक नहीं है बल्कि यह मध्यकालीन भारत की सांस्कृतिक और धार्मिक स्थिति को भी दर्शाता है। भारतीय समाज में तीर्थ का मतलब धार्मिक या पवित्र स्थानों से है। तीर्थ में आकर व्यक्ति को आत्मिक शांति की अनुभूति होती है। धार्मिक मान्यतानुसार तीर्थ का सेवन आत्मिक उन्नति एवं प्रगति का द्वार खोलता है। तीर्थयात्रा खुद को तलाशने की एक दिव्य यात्रा है। मुगलकाल में यात्रियों को तीर्थयात्रा के लिए कर चुकाना पड़ता था। मुगल शासक अकबर तीर्थ की महत्ता एवं धार्मिकता उदारता से प्रेरित होकर तीर्थयात्रा कर को समाप्त कर दिया।[1]

तुलसीदास भी तीर्थों के प्रति अटूट श्रद्धा व विश्वास रखते थे जिसका वर्णन हमें उनकी रचनाओं में देखने को मिलती है। तुलसीदास गंगा, प्रयाग, काशी, अयोध्या, चित्रकूट इत्यादि तीर्थों का उल्लेख किये है।

गंगा : गोस्वामी तुलसीदास के काव्य में गंगा का वर्णन अत्यन्त पवित्र, दिव्य और श्रद्धापूर्ण रूप में किया गया है। तुलसीदास गंगा की महिमा का गुणगान इस प्रकार किये हैं :

जय जय भगीरथनन्दिनि, मुनि चत्र चकोर–चन्दिनि,
नर–नाग–बिबुध–बन्दिनि जय जहनु बालिका।
बिस्नु–पद–सरोजजासि, ईस सीसपर बिभासि,
त्रिपथगासि, पुन्यरासि, पाप–छालिका।।[2]

(अर्थात तुलसीदास ने गंगा को केवल एक नदी नहीं, बल्कि पाप नाशिनी,

मोक्षदायिनी और भगवान शिव की जटाओं से निकलने वाली पतित पावनी माँ के रूप में चित्रित किया है।

गंगा जी के अलौकिक प्रभाव का वर्णन कवितावली में इस प्रकार है–

देवनदी कहँ जो जन जान किए मनसा,
कल कोटि उधारे।
ओककी नीव परी हरिलोक बिलोकत गंग!
तरंग तिहारे।।[3]

(अर्थात् तुलसीदास इन पंक्तियों के माध्यम से गंगा जी की अपार महिमा को दर्शाते हैं उनके दर्शन या स्नान के विचार मात्र से ही वह अपने कुल की करोड़ों पीढ़ियों का उद्धार कर देता है। उनकी तरंगों को देखकर ऐसा लगता है कि जैसे हरिलोक में उनके घर की नींव पड़ गई। तुलसीदास जी लिखते हैं गंगा जी के दर्शन और पूजन से भक्तों की इच्छाएँ पूरी होती हैं :–

सियँ सुरसरिहि कहजेउ कर जोरी।
मातु मनोरथ पुरउबि मोरी।।[4]

(अर्थात् वनवास के दौरान सीता जी स्नान करके हाथ जोड़कर गंगा जी से प्रार्थना करती है हे माता मेरा मनोरथ पूरा कीजियेगा।)

प्रयाग : तुलसीदास ने प्रयागराज को तीर्थराज की संज्ञा दी है।[5] उनके अनुसार यहाँ स्नान करने से न केवल शरीर बल्कि और आत्मा भी पवित्र हो जाती है। प्रयाग में गंगा, यमुना एवं सरस्वती तीनों नदियों का संगम स्थल होने के कारण इसे त्रिवेणी भी कहा जाता है।

प्रयागराज की महिमा का वर्णन रामचरितमानस के अयोध्याकाण्ड में इस प्रकार है–

हेतु अगम गढ़ु गाढ़ सुहावा।
सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्द पावा।।[6]

(अर्थात् तुलसीदास प्रयागराज की तुलना एक दुर्ग से किये जो दुर्गम, मजबूत और सुंदर है, जहाँ पाप रूपी शत्रु सपने में भी नहीं आ सकते हैं।)

प्रयागराज के प्रभाव को समझने के लिए तुलसीदास जी इस चौपाई का जिक्र करते हैं–

को कहि सकई प्रयाग प्रभाऊ। कलुष पुंज कुंजर मृगराऊ।।
अस तीरथपति देखि सुहावा। मुख सागर रघुबर सुखु पावा।।[7]

(अर्थात् प्रयागराज का वर्णन इतना महान है कि उसका वर्णन कोई कर नहीं सकता। यह पाप के समूह रूप हाथी को मारने के लिए सिंह के समान है।)

काशी : लोकमान्यता, पौराणिक तथा ऐतिहासिक साक्ष्य के अनुसार काशी संसार का सबसे प्राचीन नगर माना जाता है। काशी को आदि काल से ही हिन्दूओं के तीर्थस्थान के रूप में मान्यता प्राप्त है। इस नगर को वाराणसी भी कहते हैं। यह वरूणा और अस्सी दो नदियों के बीच गंगा के किनारे स्थित है। काशी की महिमा का गुणगान तुलसीदास ने इस प्रकार किये है–

मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर।
जहाँ बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न।।[8]

(अर्थात् काशी को मुक्ति क्षेत्र माना जाता है। इस अविमुक्त क्षेत्र में प्रवेश करते ही मनुष्य के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं और उसे मुक्ति मिल जाती है।)

पौराणिक मान्यता के अनुसार काशी में मुक्ति, प्रयाग में इच्छापूर्ति और वृंदावन में भक्ति स्वतः मिल जाती है।[9] तुलसीदास ने काशी की महिमा का गान किया है और इसे पृथ्वीमण्सडल का मध्यक्षेत्र माना है, जो स्थान शरीर में हृदय का है, तुलसीदास के अनुसार वही स्थान काशी का पृथ्वी पर है।[10]

विश्वनाथ मन्दिर की पवित्रता भारत में सर्वोपरि मानी जाती है। पौराणिक मान्यता के अनुसार काशी शिव के त्रिशूल पर स्थित है।

अयोध्या : अयोध्या उत्तर प्रदेश में सरयू नदी के तट पर स्थित एक प्राचीन और ऐतिहासिक शहर है, जिसे भगवान राम की जन्मस्थली माना जाता है।

तुलसीदास लिखते हैं–

पावस समय कहु अवध बरनत सुनि अघौघ नसावहीं।[11]

(अर्थात् अयोध्या जैसे तीर्थ का वर्णन सुनने से सब पाप समूह नष्ट हो जाते हैं।)

पुराणों में कहा गया है कि सरयू नदी का दर्शन, स्पर्श, स्नान और जलपान पापों से मुक्ति दिलाता है।

चित्रकूट : चित्रकूट भी काशी की तरह उत्तर प्रदेश में स्थित है। यह बाँदा और झाँसी के बीच मंदाकिनी या पयस्विनी नदी के तट पर स्थित है। इसकी पवित्रता के कारण इस नदी को गंगा भी कहा जाता है।[12] चित्रकूट में ही कामदगिरि पर्वत है। इसी पर्वत पर 13 वर्ष तक श्रीराम, लक्ष्मणऔर सीता ने वनवास का समय व्यतीत किया था।[13] महर्षि और अनुसूया का यहीं आश्रम है, राम और भरत का मिलन भी यही हुआ था।[14] चित्रकूट की प्रशंसा में तुलसीदास ने गीतावली में अनेक पद लिखे हैं जिनमें से कुछ इस प्रकार है–

सब दिन चित्रकूट नीको लागत।
बरषा ऋतु प्रबेस बिसेष गिरी देखन मन अनुरागत।।
चहुँ दिसि बन सम्पन्न, बिहँग मृग बोलत सोभा पावत।
जनु सुनरेस देस पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुख छावत।।
मंदाकिनिहिं लित झरना झरि झरि भरि भरि जल आछे।
तुलसीसकल सुकृत लागे मानो राम भगति के पाछे।।[15]

(अर्थात् तुलसीदास चित्रकूट की प्रशंसा में लिखते हैं कि चित्रकूट पर्वत हमेशा ही सुहावना लगता है परन्तु वर्षा ऋतु में कुछ खास ही मनोरम दिखता है। इसके चारों ओर फल–फुल से सम्पन्न वन है, पक्षी –मृगगण) ऐसे आनंदमग्न होकर कोलाहल के बजाय मधुर और सुखद बोलियाँ बोलते हैं जैसे किसी अच्छे राजा के देश और नगर में प्रजा आनंदपूर्वक सब प्रकार के सुख भोग रही हो। स्वच्छ जल से भरे हुए झरने झर–झर कर मन्दाकिनी नदी में मिल जाते हैं जैसे वे श्रीराम की भक्ति के पीछे–पीछे चले आ रहे हों।)

देव उपासना : तुलसीदास देव उपासना के माध्यम से समाज को एकता, नैतिकता और आध्यात्मिक संबल प्रदान किया। उनके काव्य में देवता केवल पूजनीय

शक्ति नहीं, बल्कि धर्म और मानव मूल्यों के जीवंत प्रतीक है। सरस्वती, गणेश, पार्वती, शंकर, गुरु आदि देवों का चरित्र न केवल धार्मिक आस्था बल्कि एक ऐतिहासिक आदर्श भी बनकर उभरता है।

सरस्वती : गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने महाकाव्य रामचरितमानस के बालकाण्ड में सरस्वती जी की वंदना बहुत ही विनम्रता, काव्यात्मक और श्रद्धा के साथ की है। वे माता सरस्वती को ज्ञान, वाणी और कविता की अधिष्ठात्री देवी मानते है। तुलसीदास जी द्वारा सरस्वती वंदना और उनकी महिमा का वर्णन इस प्रकार किया गया है–

वर्णानामर्थसंधानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्तारौं वन्दे वाणीविनायकौ।।[16]

(अर्थात् अक्षरों, अर्थ समूहों, रसों, छंदों और मंगलों को करने वाली सरस्वती जी और गणेश जी की मैं वंदना करता हूँ।)

तुलसीदास ने सरस्वती एवं गणेश जी की एक साथ वंदना की है जो यह संदेश देती है कि जीवन में केवल जानकारी पर्याप्त नहीं है बल्कि ज्ञान की देवी सरस्वती तथा विवेक के देवता गणेश भगवान अर्थात् बुद्धि तथा विवेक का होना भी अनिवार्य है। इसलिए किसी भी कार्य की शुरूआत में हमें सरस्वती जी एवं गणेश भगवान की वंदना करनी चाहिए।

गणेश : गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस एवं विनयपत्रिका का प्रारम्भ श्री गणेश स्तुति से किये हैं। रामचरितमानस में गणेश वंदना का जिक्र उपरोक्त किया गया है। विनयपत्रिका में गणेश भगवान की स्तुति इस प्रकार की गई है–

गाइये गनपति जगबंदन। संकर–सुबन भवानी नंदन।।
सिद्धि–सदन, गज–बदन, बिनायक। कृपानसेंधु, सुंदर, सब–लायक।।
मोदक–प्रिय, मुद–मंगल–दाता। विद्या–बारिधि, बुद्धि–बिधाता।।
माँगत तुलसीदास कर जोरे। बसहिं रामसिय मानस मोरे।।[17]

(भक्त तुलसीदास जी मंगलकारी भगवान गणेश जी की वंदना करते हुए उनसे अपने हृदय में निवास करने की प्रार्थना कर रहे हैं। तुलसीदास जी कहते हैं– हे भाई उन गणेश जी का गुणगान करो, जो संपूर्ण जगत के वंदनीय है, जो कल्याण के धाम है और माता पार्वतमी व भगवान शिव के पुत्र हैं। वे सिद्धियों के स्थान है, हाथी के समान मुख वाले और बड़े ही सुन्दर है। वे कृपा के सागर हैं और सभी कार्यों को सिद्धि करने में समर्थ है। उनको लड्डू अत्यन्त प्रिय है, वे आनंद और मंगल प्रदान करने वाले है। वे विद्या के अगाध समुद्र और बुद्धि के विधाता है। तुलसीदास जी हाथ जोड़कर यह वर माँगते है कि हे प्रभु आप मेरे मन रूपी सरोवर में सदैव निवास करें।)

तुलसीदास जी समस्त भक्तों को इस सतुति के माध्यम से यह कह रहे हैं कि श्री गणेश जी समस्त विद्या, बुद्धि और मंगल के दाता है। भक्त उनके दिव्य स्वरूप और गुणों का स्मरण करते हुए उनसे यह याचना करते हैं कि वे उनकी बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाएँ और उनके हृदय में प्रतिष्ठित हो। हिन्दू धर्म के सभी सम्प्रदायों में सभी मंगल कार्यों के आरंभ में गौरी–गणेश की पूजा सबसे पहले होती है। पुस्तक, पत्र, बही आदि किसी भी लेख के आरंभ में पहले 'श्री गणेशाय नमः' लिखने की पुरानी प्रथा चली आ रही है।

पार्वती : गोस्वामी तुलसीदास जी ने पार्वती जी को जगदंबा, शक्ति और भगवान शिव की अर्धांगिनी के रूप में सर्वोच्च स्थान दिया है। उन्होंने पार्वती मंगल में पार्वतीजी के बारे में बहुत ही आदर और रसमय चित्रण किया है। रामचरितमानस के शुरूआत में तुलसीदास जी ने पार्वती जी को गणेश, सरस्वती, शिव और गुरु के साथ वंदनीय माना है। जिसका वर्णन इस प्रकार है–

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पयन्ति सिद्धाः स्वान्तः स्थमीश्वरम्।।[18]

(अर्थात् तुलसीदास जी लिखते हैं कि श्रद्धा और विश्वास के स्वरूप पार्वती जी और श्री शंकर भगवान की मैं वन्दना करता हूँ जिसके बिना सिद्धजन अपने अन्तःकरण में स्थित ईश्वर को नहीं देख सकते हैं।)

पौराणिक मान्यता है कि जगत के उद्भव, पालन तथा संहार का कार्य शक्ति की लीला से होता है। उपनिषदों में हिमालय पुत्री उमा अर्थात पार्वती को ज्ञान की अधिष्ठात्री माना गया है। तुलसीदास ने पार्वती जी की कठोर तपस्या और शिव जी के प्रति उनकी निश्चल भक्ति का बहुत ही हृदयग्राही चित्रण किया है। पार्वती जी की कथा को सुनने और गाने से तुलसीदास के अनुसार मनुष्यों का विवाह और मांगलिक कार्यों में सुख और कल्याण मिलता है। संक्षेप में कह सकते हैं कि तुलसीदास जी पार्वती जी को अत्यन्त पवित्र तपस्विनी और शक्ति स्वरूप के रूप में देखते हैं, जो शिवजी के माध्यम से जगत का कल्याण करती हैं।

शिव : शिव जी का अर्थ शुभ, कल्याण, मंगल, करूणाकार आदि माना जाता है। शिव जी की महिमा का बखान विनय पत्रिका में तुलसीदास द्वारा इस प्रकार किया गया है :–

देव बड़े दाता बड़े संकर बड़े भोरे।
किये दूर दुःख सबनिके, जिन्ह जिन्ह कर जोरे।।
सेवा, सुमिरन, पूजिबौ, पात आखत थोरे।
दिये जगत जहँ लगि सबै, सुख, गज, रथ, घोरे।।[19]

(अर्थात तुलसीदास जी भगवान शिव की स्तुति करते हुए कहते हैं कि हे शंकर! आप बड़े देव हैं, बड़े दानी हैं और बड़े भोले हैं। जिन–जिन लोगों ने आपके सामने हाथ जोड़े, आपने बिना भेद–भाव के उन सब लोगों के दुःख दूर कर दिये। आपकी सेवा, स्मरण और पूजन से हाथी, रथ, घोड़े तथा जगत में जितने सुख के पदार्थ है, सो सभी दे डालते है।

दीन दयालु भगत–आरति–हर, सब प्रकार समरथ भगवान।
कालकूट–जुर जरत सुरासुर, निज पन लागि किये बिषपाना।।
दारून दनुज, जगत–दुखदासयक, मारेउ त्रिपुर एक ही बान।।[20]

(अर्थात् हे शिव आप दीनों पर दया करने वाले, भक्तों के कष्ट हरने वाले और सब प्रकार से समर्थ ईश्वर हैं। आपने समुद्र मंथन के दौरान कालकूट विष को पीकर

सभी दीन–दुखियों के प्राणों की रक्षा किये।)

तुलसीदास ने उन्हें ज्ञान का प्रवक्ता मानते हैं। रामावतार पाण्डेय अपनी पुस्तक 'तुलसीकृत विनयपत्रिका का काव्यशास्त्रीय अध्ययन' में लिखते हैं ''शिव का निवास स्थान काशी में स्थित श्मशान माना जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि जब मनुष्य सांसारिक भोग–वासना से हटकर श्मशान जाता है, तब उसके मन से वैराग्य, पुण्य कर्म, परोपकार, पाप का प्रायश्चित इत्यादि भाव का बोध होता है। यही से मन में शिव–भाव की उत्पत्ति होती है।''[21]

गुरु : गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में गुरु की महिमा का बहुत ही ओजस्वी और श्रद्धापूर्ण वर्णन किये है। उनके अनुसार, गुरु के बिना ज्ञान, भक्ति और मोक्ष असंभव है। उन्होंने गुरु को भगवान के समतुल्य या उससे भी ऊँचा स्थान दिया है। रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में गुरु के महत्व को दर्शाया गया है–

गुरु बिनु भाव निधि तरइ न कोई।
जौं बिरंचि संकर सम होई।।[22]

अर्थात् गुरु के बिना कोई भवसागर अर्थात् संसार रूपी सागर से पार नहीं उतारा जा सकता। 'बिनु गुर होई कि ग्यान' अर्थात् गुरु के बिना ज्ञान की प्राप्ति असंभव है। हमारे भारतीय संस्कृति में गुरु को सर्वोपरि श्रेष्ठ मानते हुए यह कहा जाता है –

गुरुर्ब्रह्मा गुरुविष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुर्साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।।

अर्थात् गुरु में सृजन, अनुपालन एवं विकृति करने की शक्ति होती है।

तुलसीदास ने रामचरितमानस के बालकाण्ड में गुरु की वंदना इस प्रकार की है–

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नर रूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।[23]

(अर्थात् मैं उन गुरु महाराज के चरण–कमलों की वंदना करता हूँ जो कृपा के समुद्र और साक्षात् नर–रूप में भगवान विष्णु ही है। वे गुरु अज्ञान रूपी घने अंधकार को नष्ट करने वाले सूर्य के समान है।)

निष्कर्षतः तुलसीदास के ग्रन्थों में तीर्थ परम्परा और देव–उपासना का अध्ययन भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता, समन्वय और भक्ति धारा की निरंतरता को दर्शाता है। इस अध्ययन से पता चलता है कि 16वीं शताब्दी का धार्मिक सांस्कृतिक जीवन केवल अनुष्ठानों पर आधारित नहीं था, बल्कि आस्था, समाज और आध्यात्मिकता का समन्वित रूप था। तुलसीदास ने तीर्थ और देव–भक्ति को मात्र धार्मिक क्रियाओं की सीमा में न रखकर आत्म–शुद्धि और जनसंगठन का माध्यम बनाया। इस अध्ययन से यही स्पष्ट होता है कि तुलसीदास के ग्रन्थ केवल धार्मिक काव्य नहीं बल्कि भारतीय समाज के सांस्कृतिक दस्तावेज है। इस प्रकार तुलसीदास के ग्रन्थ भारतीय धार्मिक चेतना को न केवल समृद्ध करता है बल्कि उसे नई दिशा भी प्रदान करती है जिससे उनका साहित्य भारतीय संस्कृति में सदैव जीवंत और अप्रतिम बना रहेगा।

अतः कहा जा सकता है कि तुलसीदास के ग्रन्थों में तीर्थ परम्परा और देव उपासना एक ऐसी आध्यात्मिक दृष्टि प्रस्तुत करती है जो आज भी प्रासंगिक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. शेख अबुल फजल, अकबरनामा, भाग–1, हि0अनु0 मथुरालाल शर्मा (नई दिल्ली 2016), पृ0 217।
2. गोस्वामी तुलसीदास, विनयपत्रिका, पद्य सं0 17/1, अनु0 हनुमानप्रसाद पोद्दार, गीता प्रेस (गोरखपुर, वि0सं0 2080), पृ0 27।
3. गोस्वामी तुलसीदास, कवितावली, पद्य सं0 145, हि0अनु0 इन्द्रदेवनारायण, गीताप्रेस (गोरखपुर वि0सं0 2079), पृ0 140।
4. गोस्वामी तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, पद्य सं0 102/1, पृ0 387।
5. कवितावली, पद्य सं0 144, पृ0 140।
6. रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, पद्य सं0 104/3, पृ0 389।
7. वही, पद्य सं0 105/1, पृ0 20 390।
8. गोस्वामी तुलसीदास, दोहावली, पद्य सं0 237, अनु0 हनुमानप्रसाद पोद्दार, पृ0 66।
9. रामावतार पाण्डेय, तुलसीकृत विनयपत्रिका का काव्यशास्त्रीय अध्ययन, (वाराणसी 2001), पृ0 64
10. वही।
11. गीतावली, उत्तरकांउ, पद्य सं0 19/5, पृ0 363।
12. तुलसीकृत विनयपत्रिका का काव्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ0 64।
13. गीतावली, अयोध्याकाण्ड, पद्य सं0 43।
14. तुलसीकृत विनयपत्रिका का काव्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ0 65।
15. गीतावली, पद्य सं0 50, पृ0 202।
16. रामचरितमानस, बालकांड, श्लोक, पृ0 1।
17. विनयपत्रिका, पद्य सं0 1, पृ0 1
18. रामचरितमानस, बालकांड, श्लोक 2, पृ0 1
19. विनयपत्रिका, पद्य सं0 8/1, 2, पृ0 16।
20. विनयपत्रिका, पद्य सं0 3/1, 2, पृ0 12।
21. तुलसीकृत विनयपत्रिका का काव्यशास्त्रीय अध्ययन, पृ0 53।
22. रामचरितमानस, उत्तरकांड, पद्य सं0 92(ख)/3, पृ0 916।
23. रामचरितमानस, बालकांड, सोरठा–5, पृ0 3।

•